International Journal of Research's
Special Issue for UGC Approved Journal l -Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-I SSN: 2348-6848
p-I SSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

पूर्व मध्य कालीन सामाजिक जीवन

डा0 अवध नारायण
प्राचार्य एस0एम0आर0डी0 कॉलेज
हण्डिया इलाहाबाद

गुप्त साम्राज्य के पतन के पश्चात् उत्तर भारत में विदेशी आक्रमणों, सामन्ती प्रवृत्तियों का विकास और बौद्धधर्म के पतोन्मुख परिस्थितियों में जाति व्यवस्था में कठोरता दिखायी पड़ता है।[1] सम्पूर्ण रूप से देखने से स्पष्ट होता है कि उत्तर भारत में जाति व्यवस्था के विस्तार के प्रमुख कारणों में विदेशी एवं देशी तत्वों का समायोजन, कर्मकाण्डीय एवं क्षेत्रीय पृथकत्वता की महत्वपूर्ण भूमिका दिखायी पडती है।

गुप्तोत्तर काल में महत्वपूर्ण सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन दृष्टि गोचर होते है। पूर्व मध्यकाल में भूमि के दान और विभाजन के फलस्वरूप एक नवीन शिक्षित वर्ग (कायस्थ) का उदय हुआ। इस युग का सर्वाधिक विस्मयकारी परिवर्तन जातियों का प्रगुणन था जिसमें ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रों इत्यादि सभी को प्रभावित किया। विजयों एवं ब्राम्हणों को भूमिदान के माध्यम से कबायली लोगों को ब्राम्हणीय व्यवस्था में जिस प्रकार समाविष्ट किया जा रहा था। उनके परिप्रेक्ष्य में नवीन सामाजिक परिवर्तनों को भली भॉति समझा जा सकता है।

साहित्यिक ग्रन्थों एवं अभिलेखो से ज्ञात होता है कि समाज ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र इन चार वर्णो में विभाजित था। समाज में ब्राम्हणों का स्थान सर्वोपरि था। इस बात की पुष्टि केवल धार्मिक ग्रन्थों से ही नहीं वरन विदेशी यात्रियों के वृतान्त से भी होती है। ह्वेनसांग, अलमसूदी एवं अलबरूनी की कृतियों से ब्राम्हणों की समाज में सर्वोच्चता दिखायी पडता है। वे शास्त्रों द्वारा निर्दिष्ट आचार का पालन करते थे। वे वेद, वेदांग एवं अन्य शास्त्रों में पारंगत होते थे। उन्हें आचार्य, उपाध्याय तथा श्रत्रिय कहा जाता था। किन्तु बदलते सामाजिक परिवेश में ब्राम्हणों को अपनी आजीविका चलाना बहुत मुश्किल हो गया था। वाहा काकर जो एव

e-I SSN: 2348-6848
p-I SSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

राजनीतिक उथल–पुथल तथा आर्थिक विवशताओं ने ब्राम्हणों को अन्य व्यवसाय अपनाने के लिए बाधा होना पडा। फलतः अध्यापन –अध्यापन या जन–या जन के साथ ही साथ आजीविका को चलाने हेतु कुछ ब्राम्हणों में कृषि एवं व्यापार का कार्य करने लगे।[2] अभिलेखों से ज्ञात होता है कि पूर्व मध्यकाल में ब्राम्हणों को भूमिदान किया जाता था और बडे पैमाने पर वे शूद्र कृषको द्वारा खेती करवाते थे। विष्णु धर्मोत्तर पुराण में भूमि के साथ दास तथा कर्म कार के दान देने का उल्लेख मिलता है। मध्य प्रदेश, प्राच्य एवं कुछ अन्य स्थानों के ब्राम्हण स्वंय अपने हाथ से खेती करते थे।

पूर्व मध्य काल की सबसे महत्वपूर्ण घटना है– राजपूतो का उदय जिन्होने प्राचीन क्षत्रियों का स्थान ले लिया। 12वीं शताब्दी तक राजपूतों की 36 जातियां प्रसिद्ध हो गयी थी यथा– पाल, प्रतिहार, परमार, चौल्युक्य, चौहान, चन्देल, गुहिल कछवाहा इत्यादि। ये सभी क्षत्रिय कहलाने लगे। इब्नखुददिब ने क्षत्रियों के दो वर्गों का उल्लेख किया है–सबूक फूरिया तथा कतरिया। ए0एस0 अल्टेकर क अनुसार सबूकफूरिया सब क्षत्रिय थे।[3] इसके अन्तर्गत राजवंश तथा सामत वर्ग और योद्रा वर्ग को इसमें सम्मिलित किया गया है। कतरिया साधारण क्षत्रिय थे जो कृषि, इत्यादि व्यवसायों से थी आजीविका चलाते थे।

धर्म शास्त्रों में वैश्यों के लिए कृषि, पशुपालन एवं व्यापार करने की अनुमति प्राप्त थी। कालान्तर में वैश्यों ने सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए कृषि कर्म एवं पशुपालन त्यागकर व्यापार को आजीविका का साधन बना लिया था। खान–पान तथा अन्य प्रकार के सामाजिक व्यवहार में वैश्य शूद्रों के अधिक निकट दिखायी पडते है। अल्बरूनी ने वैश्यों एवं शूद्रों में कोई भेद नही देखा है। इस युग में वैश्यवर्ग वैष्णधर्म एवं जैनधर्म का अनुयायी था। जिस प्रकार प्राचीन काल में वैश्यों ने बौद्ध धर्म के प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान दिया उसी प्रकार पूर्व मध्यकाल में वैष्णव एवं जैनधर्म में उनका महत्वपूर्ण स्थान है। इस काल की स्मृतियों एवं निबन्धों में सभी उद्योग और व्यवसाय शूद्रों की आजीविका के साधन बताए गये है। इसकाल में आर्थिक दृष्टि के सबसे महत्वपूर्ण विशेषताएं है शूद्रों को कृषि कार्य का व्यवसाय अपनाना।

e-I SSN: 2348-6848
p-I SSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

ह्वेनसांग तथा इब्नखुद्दिब ने कृषि शूद्रों को सामान्य व्यवसाय बताया गया है।[4] निःसन्देह उस युग में शूद्र कृषकों की अख्या में काफी वृद्धि हुई। वे स्वयं खेती करते थे और अनेक प्रकार के कर देते थे। करों की अधिकता के कारण वे आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न नहीं थे। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि इस युग में दासों की स्थिति में सुधार हुआ और वे कृषि दास बन गये। सामतवाद के व्यापक तत्वों में कृषक एवं अन्य छोटे लोगों की गतिशीलता पर लगाए गये प्रतिबन्ध और स्थानीय अर्थ व्यवस्था में उनका दमन, विचौलियों का उदय एवं भू–स्वामी कुलीन शासक वर्ग का पद सोपन विशेष रूप से उल्लेखनीय है ऐसा माना गया है कि पूर्ववर्ती दास एवं भाडे के श्रमिक रूपी शूद्रों का कृषकों के रूप में पिरवर्तन भारत में सामंतवाद के अविभार्व की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण क्रिया थी। वैश्यों को निरन्तर शूद्रों के बराबर बताने की जिस प्रवृत्ति के चिन्ह् पूर्ववर्ती काल में मिलते है। इस काल के दौरान यह प्रवृत्ति और अधिक महत्वपूर्ण हो गई थी। बदलती हुई परिस्थितियों में सामाज में शूद्रों की संख्या बढ़ गई और ब्राम्हणों को पजमानों से आर्थिक लाभ था। शूद्रों की धार्मिक स्थिति में सुधार हुआ। शूद्रों को दो वर्गों में विभक्त किया गया सत् और असत्। सत शूद्रों को पौराणिक विधि से संस्कार, पच महायज्ञ इत्यादि धार्मिक कार्य करने का अधिकार दे दिया गया।

कायस्थों का एक जाति के रूप में आविर्भाव भी इस काल की एक महत्वपूर्ण घटना है। इस जाति के लोग सम्भवतः अधिकार गणक और लेखक थे। वे भूमि और राजस्व सम्बन्धी दस्तावेज तथा हिसाब किताब करते थे। और अपने पद का अनुचित लाभ उठाकर प्रजा पर अत्याचार करते थे। इस कारण याज्ञवल्क्य स्मृति में लिखा है कि राजा को कायस्थों से शोषित प्रजा की रक्षा करनी चाहिए। इस काल में कार्यस्थों की अलग जाति वन गई। इसमें भी उनेक उपजातियां बन गई थी जैसे श्रीवास्तव, माथुर, करण आदि।

धर्मशास्त्रकारों ने पूर्व मध्यकाल में रक्तशुद्धि पर बल देकर विवाह एवं खान–पान का नियम कठोर बना लिया। अन्तरजातीय विवाहों को समाप्त करने का प्रयत्न किया गया। यही नही छूआ–छूत की भावना का विकास हुआ। इसकाल में धोबी, चमार, नट, बढ़ई, धीवर, कोली

e-I SSN: 2348-6848
p-I SSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

सभी को अछूत मान लिया गया। इसकाल में स्त्रियों की स्थिति में पहले की अपेक्षा गिरावट दिखायी पडती है। उनका विवाह कम आयु में किया जाने लगा। बाल विवाह के कारण बालिकाएं शिक्षा से वंचित होने लगी। केवल राजवंशों या धनी परिवारों की कन्याएं शिक्षा प्राप्त कर सकीं। सती प्रथा का विकास हुआ। इस काल में दास–प्रथा में भी वृद्धि हुई। जैनग्रन्थ 'समरैच्चकहा तथा 'प्रबन्धचिन्तामणि' में दासों के व्यापार की अनेक कथाएं है। पुराणों से ज्ञात होता है कि दासों को दान में देने की प्रथा थी बहुत व्यापक थी। ऋण चुका न सकने वाला व्यक्ति स्वंय अपने को दास के रूप में बेच देते थे। इस काल में दासों के अधिकारों की रक्षा के लिए कोई नियम नहीं बनाएं। स्वामी का दास पर पूर्ण अधिकार था।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि पूर्व मध्यकाल में सामाज में बहुत संकीर्णता आ गई। सामन्तीय प्रणाली के विकास के कारण अनेक शासक आपस में लड़ते रहते थे। उन्हे प्रजा की शक्ति व सुरक्षा करने का कर्तव्य कालेश मात्र थी ध्यान नहीं रहता था। शासक और दरवारी भोग–विलास में पडे रहते थे। किसानों और कारीगरों की आर्थिक दशा बहुत खराब हो गयी। समाज में इस आर्थिक विषमता के कारण भी भारतीयों की विदेशियों के विरूद्ध पराजय हुई।

सन्दर्भ–

1. यादव, बी0एन0एस0 सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नार्दन इण्डिया इन द टवेल्थ संचुरी, इलाहाबाद–पृष्ठ 4
2. यादव, वी0एन0एस0 सोसाइटी एण्ड कल्चर इन नार्दन इण्डिया – पृष्ठ 20
3. अल्टेकर, ए0एस0 राष्ट्रकूटाज एण्ड देयर टाइम्स पृष्ठ 318–19
4. शर्मा, आर0एस0, पूर्व मध्य कालीन भारत का सामंती समाज और संस्कृति पृष्ठ 174